मेंहदी श्रौर महावर

कविता संग्रह

मेंहदी और महावर

—उमाकान्त मालवीय

साहित्य भवन प्रा० लि०
इलाहाबाद

श्रद्धेय बाबू जी।

तुम्हारे चरणो मे—

'बात बोलेगी, हम नहीं'—शमशेर

प्रस्तुत काव्य-सग्रह मुख्यत. गीत-कविताओं का सग्रह है—हलके-फुलके पुलकित क्षणों के गीत। चाहता हूँ, बात धरती की ही रहे, आकाशी न हो जाय। परन्तु इस सारी सतर्कता के बावजूद भी कलम बहक जाय तो वह मेरा दोष नहीं वरन् इस युग का है, जिसकी जलवायु में, वातावरण में, जिंदगी मे, कहीं तारतम्य जैसी किसी चीज का कोई अस्तित्व ही नहीं है। हम सब, मेरा अभिप्राय अपनी कवि-बिरादरी से है—चाहे वे किसी ख़ेमे के हों—बिना अपवाद 'गीत फरोश' हैं। यह एक सत्य है जिससे, आँख मूँदना आत्म-हत्या का पाप मोल लेना है।

बात, जो पहले स्वीकार करनी थी, वह अब स्वीकार करता हूँ कि मैं कवि नहीं हूँ। कवि कदम-कदम पर समझौते-सौदेबाजी नहीं करता, मुझे करनी पड़ती है। कवि बिकाऊ नहीं होता और मै बिकाऊ हूँ। बिकाऊ तो हूँ मगर अब तक बिका नहीं। बाजार मे हूँ, जाने कब दाम लग जाय, या दाम न लगे तो लोक-कथाओं मे चर्चित राजा नल पर विपत्ति लाने वाले 'सनीचर' के पुतले की भाँति घूरे पर फेंका भी जा सकता हूँ। आकांक्षा पाप नहीं है, यदि उससे किसी को असुविधा न हो। आप को कोई आपत्ति न हो तो अपना मन्तव्य कह दूँ—कवि हूँ नहीं, कवि बनने की लालसा जरूर है। 'कविर्मनीषी परिभू स्वयभू' की परिधि में मेरी पैठ नहीं। कवि बनने की प्रक्रिया मे भी आ जाऊँ तो मुझे सन्तोष होगा।

संग्रहीत गीत, मात्र छद, भाव और शब्दों के मेले नहीं, मेरी ही उम्र की छोटी बड़ी इकाइयाँ है। यह वे रिकार्ड हैं जिनमे मेरे विगत स्पन्दन बदी हैं, जिनमें मेरे गुजरते क्षण काल की अवज्ञा कर ठहर गए हैं। गोसाईं जी के कथन, 'निज कबित्त केहि लाग न नीका' का मै अपवाद नहीं हूँ। किन्तु आप चाहें तो कह सकते हैं, 'यह गीत मुझे अच्छे नहीं लगे।' मुझे शायद कष्ट न होगा।

अधिकाश गीत, आह्लाद-क्षणों के गीत हैं। सहज ही प्रश्न उठता है कि दुख-दर्द के क्षणों के क्यों नही? ऐसा नही कि इन पंक्तियो के लेखक के जीवन में दुख-दर्द है ही नहीं। वे है, पर आप के लिए नही। जमाने के पास यूँ ही अवसाद कम नही हैं, मै उस राशि मे अपने भी क्यों जोड़ दूँ? मेरा अधिकाश सुख सार्वजनिक है और यही उसकी सार्थकता है। उस पर आप सही-गलत राय दे सकते हैं, मुझे कोई आपत्ति नही होगी। जहाँ तक मेरे अवसादों का प्रश्न है, निवेदन करना चाहता हूँ कि वे सार्वजनिक नही है। उनका सार्वजनिक होना मुझे स्वीकार नहीं, क्यों कि ऐसा होने पर आप उन पर भी अपनी सही-गलत राय देने लगेगे। क्षमा करे, यदि मै कहूँ कि मै आपको इसका अधिकारी नही मानता और न यह मुझे ही सह्य है। अपनी ही कविता की पक्तियाँ उधृत करना चाहूँगा।

"दर्द, दफन जो हो न जाय अन्तरतम मन में,
और अनावृत हो शब्दों में बिखर जाय जो,
बहुत निद्य है।"

गीतों में वैयक्तिकता, सक्षिप्तता, क्रमबद्धता के साथ गीतात्मक ऋजुता (Lyrical lucidity) का मै हिमायती हूँ, किन्तु तथाकथित ऋजुता, स्निग्धता के दुराग्रह के छोर पर शृङ्गार आधिक्य और जनपदीय शब्दों की भरमार से उपजी लिबलिबाहट या चिपचिपाहट का समर्थन मै नहीं करता।

मैं अनुभव करता हूँ कि सूर मीरा से बच्चन तक हिन्दी गीत-काव्य का एक स्वस्थ, स्वतंत्र, स्पष्ट, व्यक्तित्व रहा, परन्तु बच्चन के बाद वह स्पष्टता धुँधला गई और उसका स्वतंत्र विकास नहीं हुआ। बच्चन जी के परवर्ती गीतकारों में अधिकाशत: उनके गीतों के सूक्ष्म तत्व तो नही ग्रहण कर पाये, हाँ उन्होंने स्थूल प्रणय निवेदन अवश्य ग्रहण किये, जिसे पचा सकने में अक्षम होने के कारण वे वमन कर रहे है। एक वर्ग है जो उर्दू शेरों के छायानुवाद कर, गीतों में स्वय सिद्ध वाक्यों ((Dictums Axioms) मे बोलने का अभ्यस्त है। दूसरा वर्ग लोकगीतो की लोकप्रियता के कारण जनपदीय, शब्दावलि की भरमार कर रहा है और इस अभियान मे ग्राह्य-अग्राह्य का उसका विवेक ही लुप्त हो गया है। एक तीसरा वर्ग, उन लोगों का है, जो नागार्जुन के शब्दों में, 'कुहासे की भाषा न साँझ की न भोर की।' के सम्प्रदाय में सम्मिलित हैं। कारण स्पष्ट है, गीतकारो के बीच

अज्ञेय, शमशेर, भारती जैसे पढे-लिखे मननशील लोगों के अभाव में वे अपने ही 'नीड़' मे सीमित भयानक हीन भावना (Inferiority Complex) से ग्रस्त, 'नयी कविता' के किसी काल्पनिक दैत्य से लोहा लेने के लिए (Don Quixote) की भाँति भाला लिये भागे जा रहे हैं। मैं इन्हें हिन्दी-गीत क 'नादान-दोस्त' मानता हूँ। सर्वं श्री नरेन्द्र शर्मा, बालकृष्ण राव, गोपालसिंह नेपाली, परमानन्द शुक्ल, मोती बी० ए०, गोपीकृष्ण गोपेश, महेन्द्र प्रताप, शान्ति मेहरोत्रा, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, दुष्यन्त कुमार जैसे कवियों ने एक जमाने में हिन्दी को अनेक ललित गीत दिये, किन्तु खेद है कि पता नही क्यों गीतों की दृष्टि से ये असमय ही चुक गए। बच्चन, गिरिजा कुमार माथुर, शम्भुनाथ सिंह, धर्मवीर भारती, खासे अच्छे गीत देते रहे है, किन्तु बहुधा निराशा होती है जब इनकी लौ मद्धिम होती जान पड़ती है। आज निचाट मरुथल मे जानकी वल्लभ शास्त्री, ठाकुर प्रसाद सिंह, गिरधर गोपाल, वीरेन्द्र मिश्र, रवीन्द्रभ्रमर, रामदरश मिश्र, राजनारायण बिसारिया आदि कुछ शाद्वल दीख रहे हैं। कदाचित् इनसे 'नये गीत' का कोई सुस्पष्ट, स्वतत्र, स्वस्थ व्यक्तित्व सँवर सके।

मुझे ऐसा लगता है कि आज की तथाकथित 'नयी कविता' में एक ऊब (Monotony) और गतिरोध स्पष्ट है। पुनरावृत्ति हो रही है। नयी कविता अपनी ऐतिहासिक भूमिका निभा चुकी और अब वह नयी रह भी नही गई है। इस घेरे के टूटने की अपेक्षा है। लेकिन इससे मै किंचित् परेशान नहीं हूँ। छायावाद या अन्य पूर्ववती काव्य धाराओं में आज जो इने-गिने मूर्धन्य कवि दीख रहे हैं वे ही नहीं, वरन् उनके साथ अनेक कवि चले थे, जिनका आज पता तक नहीं रहा। इन धाराओं में भी बहुत कुछ अनचाहा आया, लेकिन, वह प्रवाह से हट कर एक किनारे लग गया और वे जो खरे (Genuine) थे धारा मे रह गए। इस तर्क का आधार लेकर 'नयी कविता' मे जो अवाछित आ रहा है, उसके औचित्य को पुष्ट करूँ, ऐसी कोई मेरी नीयत नहीं है। परन्तु यही वस्तु-स्थिति है। मै आश्वस्त हूँ। प्रकृति के न्याय पर मुझे भरोसा है, काल सर्वोपरि निर्णायक है। जो खरा है वह रहेगा, शेष सैलाब मे बह जायेंगे। हाँ, मै हिन्दी कविता की विषयगत व्यापकता और उसकी विविधता का कायल हूँ।

इस प्रसग मे अपने साथियों और अग्रजो से कुछ निवेदन करना चाहूँगा।

अपने एकान्त क्षणों मे मै बहुधा बड़े खेद से अनुभव करता हूँ कि मेरी पीढ़ी सस्कारों से अपेक्षाकृत बहुत ही विपन्न है। सस्कार शब्द से यदि आपको चिढ है—उसका रूढिगत अर्थ लेकर तो आप कह सकते हैं कि वह परिष्कारो की दृष्टि से बहुत दरिद्र है। इस धारणा को सामने रखते हुए मै अपने को इस कथन का अपवाद नहीं मानता, और इस तथ्य को स्वीकार करता हूँ कि इस कथन के अपवाद रूप मे एकाध लोग मिल जायँगे, जिनके प्रति मै श्रद्धावनत हूँ। दूसरी ओर अग्रजो मे अधिकाश ऐसे हैं जो अपना सर्वोत्तम दाय दे चुके है और किसी मोह-बाधा से पीड़ित अपने स्थान से चिपके हुए हैं। नये लोगो के विरुद्ध जेहाद ही जिनका धर्म है, लेकिन जो स्वय में दिवालिये हैं। हमारी पीढी की संस्कारगत विपन्नता के लिए बहुत कुछ आप ही उत्तरदायी हैं। जब आपका पवित्र दाय था हमें सँवारना, तब आपने हमें गालियाँ दीं। हमने आपमें भृगु तुलसी, बिहारी को खोजने की विफल चेष्टा की और अनायास ही हमने आपमें फिरदौसी को पाया। ऐसे मे मार्ग दर्शक के अभाव मे हमारा कुण्ठित होकर दिशा-भ्रष्ट हो जाना स्वाभाविक ही था। उत्तर में आप कहेगे कि आप परमुखापेक्षी रहे ही क्यों ? और, परमुखापेक्षी की यही परिणति स्वाभाविक है। मै यह भी जानता हूँ कि अग्रजों में इस आक्षेप के अपवाद भी है। इस कारण ही मै उस शुभ घड़ी की प्रतीक्षा में हूँ कि जब अग्रजों के स्नेह आलोक में या फिर स्वयं अन्तर्निहित किसी अलौकिक ज्योति के नेतृत्व मे हम पुन सस्कार सम्पन्न हो सकेंगे।

कविता के पैरों मे आरम्भ से ही परिभाषा की बेड़ी पहनाने की अशुभ चेष्टा प्रकारान्तर से समय समय पर लोगों ने की है। मै ऐसी किसी हिमाकृत की कल्पना भी नहीं कर पाता। मेरी दृष्टि में कविता, वह चीनी लड़की नहीं है जिसके पैरों मे लोहे या काठ का जूता पहनाना जरूरी हो।

भाषा सहज हो, इससे कोई भी समझदार व्यक्ति असहमत न होगा। किन्तु, सहज की साधना ही दुरूह है। व्यक्ति जब तक स्वय सहज न हो, अभिव्यक्ति सहज हो ही नहीं सकती। सहज, बाजारू का पर्याय नहीं है। कुछ लोगों का यह कोरा भ्रम है कि महज उर्दू-अरबी-फारसी शब्दों के बाहुल्य से ही भाषा सहज बनायी जा सकती है। दुराग्रह दोनों ओर है—एक छोर पर संस्कृत और दूसरे छोर पर फ़ारसी निष्ठ भाषा का। मेरा व्यक्तिगत मत है कि भाषा को सहज बनाने के लिए प्रचलित शब्दावलि के अतिरिक्त जनपदीय

बोली के अक्षय कोष का उपयोग होना चाहिए। अधिक न कह कर यदि बहुप्रचलित इस कथन को दोहरा दूँ तो बात साफ हो जायेगी कि भाषा भाव की अनुवर्तिनी होती है। और, यही कथन प्रस्तुत गीतों में मेरी भाषा का मार्गदर्शक रहा है।

इनमे बहुत से गीत मुझे जिनसे मिले, उनका नाम न ले सकना मेरे सस्कारो की बड़ी प्यारी सी खूबसूरत मजबूरी है। उनके प्रति मात्र आभार-ज्ञापन एक बड़ी हलकी बात होगी। तो, फिर, "त्वदीय वस्तु गोविन्दम् तुभ्यमेव समर्पयेत्' ।

जिनका स्नेह मेरी शिराओ मे रक्त बन कर संचरित है, जिन्होने मुझे पिता का अभाव कभी खलने नही दिया, और जिनके स्नेह सरक्षण के कारण ये गीत अकाल काल कवलित नहीं हुए, ऐसे अपने भैया जी के चरणों का मै स्तवन करता हूँ।

'साहित्य भवन' के मत्री राजा भैया को धन्यवाद देता हूँ, जिनके कारण यह कार्य इस रूप में सामने आ सका।

एक बात अत मे और। आशीष चाहता हूँ—सम्मतियो की वह फिसलन नही जिस पर पाठक रपट जाय, कि निष्पक्ष मूल्याकन हो ही न सके।

—उमाकान्त मालवीय

अनुक्रम

हर सिगार महके ।

शिथिल हुई सयमी लगामे,
मन तुरग बहके ।

कुसुम नखत से वेणी के श्लथ, बधन मे विलसे
श्यामल किसलय की बीथी मे,
मन भावन हुलसे ।
सपनो से पंछी बाहों सी टहनी पर चहके ।

गध बनी निर्बंध अप्सरा
सम्मोहन मूर्छित ।
प्रिय पथ पर नव कुसुम बिछानी
डोल रही सस्मित ।
परस गई ऐसी बयार तन,
सुधि अगार दहके ।

पुष्प घनेरे भरे चयनिके हेरो तो आँचल,
उसी भीड मे पडा कही,
छोटा सा मन दुर्बल ।
फूलो सा मत उसे मसल देना निज कर गह के ।

रचा अलक्तक ।

एक चरण गुलमोहर कुसुमित,
दूजे पद पाटल नत मस्तक ।

छागल की कलरव गति मन्थर,
छद ताल, लय स्वर सब अनुचर,
चारण बन विरुदावलि गाते,
नही अघाते हैं स्वर सप्तक ।

गुनगुन कर गाती सी रिमझिम,
बजता जलतरग ज्यो मद्धिम ।
कदम कदम फूला कदम्ब वन,
मुग्ध लास्य का अभिनव नर्तक ।

प्रेषित करते मुखर निमन्त्रण,
उषा सान्ध्य के अरुणिम कानन,
वीतराग ! रह ले तटस्थ तू,
आखिर यह प्रवञ्चना कब तक ?

चरण धरो, चिह्न पड़े चन्दन के।

लोलुप आलियो, लज्जित कलियो की क्यारी सी,
केसर कमनीय करो से सजी सॅवारी सी,
रघुवर सिय मिलन तीर्थ कुसुमित फुलवारी सी,
ललच उठें लोचन युग नन्दन के।

स्मिति उजली चपला सी अग रग सुरधुन के,
रागो के स्रोत बने गात सूक्ष्म अणु अणु के,
झकृत है, वाद्य सकल तन मे आदिम मनु के,
गीत बने हर विह्वल स्पन्दन के।

नत नयनो की चितवन, बीथी ज्यों मिथिला की,
अलसाई प्रतिमा सी यौवन मद शिथिला की,
वरदायिनि मुद्रा सी कामधेनु कपिला की,
चक्र थमे सोम सूर्य स्यन्दन के।

अभी कल की बात ।

आज भी ताजी, आगे भी रहेगी ,
समर्पण की गध भीनी रात ।

मदन की चिर जय पताका सी फहरती,
मानसर मन तरल मीनाक्षी लहरती,
रस भिगोई हर घडी साची सिहरती,
अहि सरीखी निशा बिछुडन की लोनी,
अक भर सोई मिलन अहिवात ।

केलि कुम्हलाये सलोने स्निग्ध गजरे,
बरजते, पायल, अधिक मत बोल बज रे,
पुरुष बोला प्रकृति से, कुछ और सज रे,
साँस, सौरभ, स्पर्श, स्पन्दन, शेष थे बस,
मूर्छना मे घुल गये दो गात ।

यामिनि भर चार लोचन थे लजाये,
हर नखत आकाश गगा मे सिराये,
अभी हम तुम थे जरा ही पास आये,
तभी सिरहाने झरोखे से कायर,
चोर सा पैठा निगोडा प्रात ।

पल्लू की कोर दाब दाँत के तले,
कनखी ने किये बहुत वायदे भले ।

कगना की खनक,
पडी हाथ हथकडी ।
पाँवो मे रिमझिम की बेडियाँ पडी ।

सन्नाटे मे बैरी बोल ये खले,
हर आहट पहरू बन भीन मन छले ।

नाजो मे पले छैल सलोने पिया,
यूँ न हो अधीर,
तनिक धीर धर हिया ।

बँसवारी झुरमुट मे साँझ दिन ढले,
आऊँगी मिलने मै पिय दिया जले ।

चाँदनी का पिघलता झरना

सर्द आहें मीत मत भरना
मौन ही रह जाँय हम तुम
नियति की मरजी ।

प्रीति के चीन्हे हुए अक्षर,
पाँखुरी से अधर पर अक्सर ।
थरथराती प्यार की,
अनबोलती अरजी ।

यह उदासी महज़ विज्ञापन,
इस तरह कब हल हुई अड़चन ।
डबडबाये आँसुओं में,
बरूनियाँ अरझी ।

परछन की बेला है,

उढके चन्दन किवाड,

खोलो री ! बंद द्वार—

लक्ष्मी घर आई है।

साँसो की पुरवइया घूँघट की बदली,

धीरे ही धीरे कुछ ऊपर सरका रही।

अल्हड सी शोख नई छवि की सौदामिनी,

चाँदी की लतिका बन सौ सौ बल खा रही।

पुरखो ने पूजे है

कितने गौरी गणेश

तब यह निधि पाई है।

खोलो री ! बंद द्वार लक्ष्मी घर आई है।

होठो पर जुही खिली, भँवरो को गध मिली
घुँघराले काले सखि केश झुक आये है।
सुधियो की चिति पर है बेमौसम स्वाति घिरा,
लगता है दो सीपी मोती भर लाये है।
मरुथल से आगन की
गोदी भर देने को,
तुलसी हरियाई है।
खोलो री ! बंद द्वार तुलसी घर आई है।

जगमग है माथा, ज्यो पूरब का आसमान,
बिंदिया तो ज्यों उगता सूरज है भोर का।
आँखो की सुर्ख डोर कसती है कसमस मन,
जी को भ्रम होता है सुरधनु की डोर का।
पियरी मे सिमटी सी
दरवाज़े शोभा की
गंगा लहराई है।
खोलो री ! बंद द्वार गंगा घर आई है।

सुधि सॉकल कसमस कस प्राण कसे
ओ अन्तर्यामी किस देश बसे।

नखद्युति से नित नित नव नखत बने,
घन निकुञ्ज से श्यामल केश घने।
रिमझिम रिमझिम रसती रश्मि रजत,
रञ्जित हैं रग रग अनुराग सने।

मानस की मूरत मुसकाई है,
पद अर्पित आँसू की माल खसे।

अंग अग कुसुमित कचनार कली,
आँखे रतनाकर रतनार भली।
प्रीत पगी प्रक्षालित पग पग पर,
पदरज पूजित पल पल गॉव गली।

अन्तर-मृग भरता रह रह कुलॉच,
किन्तु चरण रेशम के फँद फँसे।

दूर्वादल दीप्त बिन्दु तुहिन तरल,
स्मिति दर्पण दमक दशन दुग्ध धवल।
सुर सेवित सोम स्निग्ध सुन्दरता,
सहज सुलभ सस्मित सुकुमार सरल।

मुग्ध मूर्छना से कब मोहित मन,
मुक्त हुआ, यदि रूपसि रूप डसे।

वर्तुल ऊर्मि तरंगित अंचल।

तरुणाई की तरल तलइया,
थिरक रही मधु उन्मद चंचल।

वय यमुना के तीर बाँसुरी
मुखर, निमीलित हृदय पाँखुरी
छद भिने तन मे मरोर बन,
मन पैठा संकोच चोर बन।

प्रियतम स्मित आनन बिसूरते,
द्वै रतनार नयन नत विह्वल।

गोरे गजरो सी दो बाहे,
गुम्फित बिन अनवासी चाहे,
विकल तृषित प्रिय पद अर्पण को,
रूप दरस लोचन दर्पण को।

मूर्तिमान हो गई प्रतीक्षा,
वैदेही देही बन माँसल।

यौवन, अनाहूत अभ्यागत,
अतिथि तुम्हारा हार्दिक स्वागत,
तन मन्दिर, तारुण्य देवता,
निज मे पूजन करे प्रियव्रता।

अलि के दल से कुन्तल कुंचित,
दो कपोल उन्मीलित पाटल।

कदली वन,

मेघ सघन,
विह्वल रहा
पाहन मन ।

छवि जूही फूल रही,
अञ्जलि भर रूप चयन ।

शख वरण,
उर्मि चरण,
सौदामिनि,
अलकरण ।

सुन पडते स्निग्ध आर्द्र,
सौरभ के मौन बयन ।

देवालय,
मदिरालय,
लय बनबन,
होते लय ।
बिछ जाते निर्विकार,
स्मिति साजे स्वप्न शयन ।

पँखुरी तट,
रस पनघट,
भरता है,
रीता घट,
पावक हिम सग सग,
सूरज शशि युग्म नयन ।

कल्पतरु के तले

कल्पतरु के तले,
सब मनोरथ पले।

बाहु सी शाखे,
किसलयी आँखे।
बिछलती तन पर,
साँझ सूरज ढले।

साध अनब्याही,
तृषा अवगाही।
भाँवरे पडती,
तोष से मिल गले।

प्रसूनों के वर,
अगम अनहद स्वर
भिने प्राणों में
बहुत भोले भले।

मइया को देती अँकवार ।

सखियो के रुँधे हुए बैन,
प्रियतम सग बीती जो रैन,
दोनों ही करते बेचैन ।
दो सुधि मे सखि का है
जीना दुश्वार ।
भाभी को देती अँकवार ।

गुँइयो का कुइयो पर शोर,
भुजबन्धन की कसक मरोर
दोनो ही पथ रहे अगोर ।
नइया को तो लगना है किसी किनार—
बहना को देनी अँकवार ।

नइहर की बेफिक्री तान,
सासुर मे तानो के बान ।
दोनो मे बिधे बसे प्रान ।
यौवन का भार, अलग सोलह सिगार ।
परिजन को देती अँकवार ।

सौदा है यह मन पटने का,

हाट हाट मे हमने हेरा,
बाट बाट मे देते फेरा,
दरवाज़े दरवाज़े टेरा,
साझीदार मिला तब ऐसा,
अवसर है सुख दुख बटने का ।

वल्लरियो का तरु आलिंगन,
सुमन, खिले ज्यो अनगिन चुम्बन ।
अलिगुञ्जन शत नूपुर नर्तन,
प्रश्न बड़ा टेढा है सम्मुख
मन मे सारा सुख अटने का ।

सुघराई पर दृष्टि बिछलती
'कनकछरी' सी कन कन छलती ।
काम आरती सी द्युति बलती,
शशि मुसकाने में विलम्ब है,
गुञ्जलकों के घन छटने का ।

एक याद,

एक कली।

चटखी तो लगी भली।

एक महक,

एक बहक।

बहुतो को बहुत खली,

चर्चा है गली गली।

एक दर्द,

आह सर्द,

अपनो से गई छली

बिना अर्थ,

कुढी जली।

एक चूक,

एक हूक।

बिछुडे तो खबर न ली,

मधुबेला बीत चली।

घन-कुन्तल उनये ।

अधरो के नव दीप्त कगूरन,
बिछले पाहुन ये ।

कँप कँप जाते दामिनि के संग,
अन्तर के स्पन्दन ।
नस नस बरबस
कसते छिन छिन कोमल भुजबधन ।
लाज भरी सिंदूरी दिशि के,
उन्नत माथ नये ।

रिमझिम के संभावित सरगम,
से अणु अणु तन्मय ।
जाने किन मंत्रो से,
मोहित तरु लतिका किसलय ।
छाये उन कजरारे
लोचन के मधु सपन नये ।

श्यामल बदली की जाली मे,
स्मित किरणें अरझी ।
बहुत मनाया चपल,
तृषा को, किन्तु रही बिरझी ।
याचक टेर रहा है उपकृत कर दो रस तनये ।

मोरपंखी घन
छाँव मिल बैठे युगल जन ।

कौन ज्यादा तरल बूँदे या हँसी,
परस्पर बन गये दोनों आरसी ।
अब नही जाती सही रिमझिम चुभन ।

कौन ज्यादा धवल दामिनि या दशन,
रोशनी इतनी कि जैसे हो जशन ।
मरु दहन होता शमन बरसे गगन ।

अधिक श्यामल मेघ या लोनी अलक,
बादलो से रस कलश जाते छलक ।
देह लचती लतर रसते अमियकण ।

फालसाई घिरे बादल,
ज्यो किसी लडकोर का
काजल लगा सा मलिन आँचल।

दूधिया दतुली सरीखे एक दो तारे,
मोदमयि किलकारियो सी सहज बौछारें।
बरसता आशीष अविरल।

कौंधती सौदामिनी ज्यो करधनी दिपती,
उमडती निष्कलुष ममता अंक कब छिपती।
पयोधर नम नेह विह्वल।

झरोखे झलमल झलकती रेशमी झालर,
सुघर झबरी कुञ्चिता सी श्याम लर की लर।
माथ उनये घने कुन्तल।

मेघ कुन्तल सुरमई
आतप जयी ।

जामुनी उपवन
हिंडोले झूलता सावन ।
वेणु से मुखरित
महँकता सघन वृन्दावन ।
आरती की शिखा सी कलिया नयी ।

लहरियाँ वर्तुल
भँवरती
उफनता यौवन ।
शिथिल बाँह कगार
गदराया सरित का तन ।
अंग अग मरोर व्यापी निरदयी ।

रिमझिमी झालर,
बिछाये पलक वातायन ।
रट लगाये पिकी,
तिरता मलय पर गायन ।
केलि श्लथ पुरवा बिहरती रसमयी ।

बादल, जो शाम से घिरा,
पानी कल रात भर गिरा।

मीठा सा एक दर्द घुल गया,
तन का ज्यों जोड जोड खुल गया,
मुखरित संकेत हो गये
मौन हो गई गहन गिरा।

मुख पर पडती फुहार की कनी,
अलकों की रेशमी परिधि बनी,
नीलम नभ से लोचन मे,
घन शावक स्वप्न बन तिरा।

पिघल गये मान के उलाहने,
घेरा जब कमल तन्तु बाँह ने,
आन्दोलित हो गई तड़ित
तडप उठी है शिरा शिरा।

बरसे ।
घन बरसे
दूर बधू वर से ।

घुँघराले,
मतवाले ।
डस जाते,
फणि काले ।
सौदामिनी दरसे ।
पिय न टरे दरसे ।

कब भाई,
पहुनाई ।
बैरन है
तरुणाई ।
षट व्यञ्जन परसे,
किन्तु नहीं परसे ।

हृदय रतन,
कुन्दनतन ।
पद चन्दन,
नित नर्तन ।
यौवन के वर से,
शाप कढे बरसे ।

शोर हुआ है बदली छाई,
पर यह तो उनकी परछाँई ।

जिनकी साँसो मे पुरवइया,
जिनकी आँखें ताल तलइया ।
जिनकी चितवन मे सौदामिनि,
स्वर मे पञ्चम की शहनाई ।

पैजनिया रिमझिम की रुनझुन,
बिछुवों मे कजली की गुनगुन ।
चरणों मे हैं मोर थिरकते,
अगो मे सुरधनु अमराई ।

मुसकानो मे मन्द फुहारे,
परिहासो में रस बौछारें ।
देह रसाल-वनो सी सुरभित,
निज मे तरुणाई बौराई ।

बारहमासा मेघ मल्हारें,
आ बैठे अधरो के द्वारे ।
नस नस डोले अजब हिडोले,
पेग बनी तन की अँगडाई ।

बादल जो बरस गये ।

रिमझिम के तरल करो से,
मन को परस गये ।

सुरधनु मे सुधियो ने रच रच कर रग भरा,
नभ सागर मे काले काजल का द्वीप निरा ।

हम उनसे दो पल,
बतियाने को तरस गये ।

कही कही सूनापन ज्यादा बढ जाता है,
कही कही मीत पास और पास आता है ।

कितने तो तरस गये,
पर कितने हरस गये ।

आँचल से पुरवा की बरबस तकरारो से,
भीगी झीनी चूनर बैरन बौछारो से ।

सौदामिनि से उघरे,
अंग अंग दरस गये ।

गुञ्जलकों पर,

अङ्कित अनगिन,

चुम्बन दुखते।

जब जब भुजपाशों में,

बीते क्षण आ रुकते।

सुधि के सुरधनु बनते मिटते,

रंग बिखरते,

रंग सिमटते।

पलक पटल पर पाटल अधरों के,

जब झुकते।

बौछारों के विषमय दंशन,

श्लथ करते सयम अनुशासन।

बादल रीते,

पर आँखों के,

घन कब चुकते।

रिमझिम लिपि में,

खत जो आते।

भीगे सदेशे दे जाते।

घन घूँघट में बिंदिया से जब,

उडगुन लुकते।

भादों के भीगे दिन बीत चले,
बादल आवे तीहे रीत चले ।

बदली लगती है गत यौवना,
जी होता जाने क्यो अनमना ।
शोख दबे पाँव शरद् आ रहा,
भँवरो का बजता है घुनघुना ।

दादुर की टेर दिये जुगनू के,
पाहुन सब पावस के मीत चले ।

अनचाही धूप घनी हो गई,
प्राणो मे तपन दंश बो गई ।
सूने लगते छज्जे खिडकियाँ,
रिमझिम की झालर है खो गई ।

झूल रही रमणी का सग छोड,
आँसू भर कजली के गीत चले ।

सरिता का कूल नगन हो रहा,
सूरज निर्लज्ज मगन हो रहा ।
गूँगी है झिल्ली की पैजनी,
बंजर सम्पूर्ण गगन हो रहा ।

रमते जोगी से घन मोरपखी,
विद्युत का धारे उपवीत चले ।

साँवले दिन,

सांवली राते ।

तुम नही तो कुछ नही भाते ।

दामिनी की,

चञ्चला चितवन ।

भेदती है,

गगन काजल वन ।

दीप्त दर्पण नयन की घातें ।

टेर दादुर और स्वर पञ्चम,

अर्थ पाते पास यदि तुम हम ।

अन्यथा सब शोर हैं केवल,

रिमझिमी बौछार बारातें ।

तलइया की तरल तरुणाई,

हिंडोलों पर कजलियाँ गाई ।

लडखडाती,

मदिर पुरवाई,

एक के बिन व्यर्थ चौमासा

निरर्थक हैं सभी सौगातें ।

पावस की रात है लुभावनी आओ इसे पलको मे काट दे।

भीग रहा तन मन अनुराग का,
स्नेह भरी झींसी झरियार से।
लथपथ है आगन घर बार सब,
बरखा की बैरिन बौछार से।

पावस की रात है सुहावनी, आओ इसे पलको मे काट दें।

जुगनू की पॉत लिये आरती,
झुक आई लाज भरी मालती।
झिल्ली की पायल झनकारती,
दादुर की टेर हिया सालती।

पुरवइया वात है लजावनी, आओ इसे पलकों मे काट दे।

झूम उठी बगिया बौराय के,
कजली के बोल औ मल्हार से।
खीझ उठी बिरहिन झुंझलाय के,
बरखा की बैरिन बौछार से।

बिरहा की घात है भयावनी, आओ इसे पलकों मे काट दे।

घन सावन के घिरे
कि जैसे
दुखिया के दिन फिरे।
बहिन घर वीरन आये हैं,
नयन जल भर भर लाये हैं।

पी विरमे परदेस, ननद बन बिजली डरवाती,
बैरन पुरवइया के मारे बुझनी सँभवाती।
बहुत चिरौरी विनती कर कर आखिर मैं हारी,
ऐसे मे जमुना तट टेरी मुरली बनवारी।
चढ तुरग कजरारे घन आँगन पर छाये हैं।

फिर पडोस मे कोयल पिहकी आई है आँधी,
फूट बह चली गंगा जमुना धीरज की बाँधी।
काँप काँप कर डरा हुआ मन पाती सा डोला,
पंख फुलाये भीगा कागा ओरी पर बोला।
राखी नियराई सुधि के बादल मँडराये हैं।

चुनरी धूमिल पड़ी, आँख का काजल धुल जाये,
देख लतर को महुआ के संग जी भर भर आये।
अँचरा थाम हवा कहती है चलो ज़रा आगे,
डरती टूट न जाय लाज के ये कच्चे धागे।
हमने अपने दर्द फुहारो से दुलराये हैं।

बिजली की पैजनिया रिमझिम के घुँघरू झनकार कर,
नई नवेली सजी बदरिया आई पावस द्वार पर ।

भीगा भीगा आँगन जैसे बिरहिन का आँचल,
तुलसी की वेदी पर चहके गौरैया चचल ।
क्वाँरी ननद सरीखी पुरवा डोल रही नटखट,
अभी ताल पर अभी बगीचा अभी चनी पनघट ।

भरी तलैया लहरें थिरकी हैं गलबहियाँ डालकर,
बढी तटो की मजबूरी वे टूटे धीरज हार कर ।

निशि का दर्पण चदा खोया बदली के आँगन,
भीगा, घुला हुआ, फीका, रवि, ऊषा का कंगन ।
नौलख हार सितारो का टूटा पानी वन वन,
काजल का त्यौहार साँवला अम्बर के प्रागण ।

बन बन मे नाचते मोर हैं नीले पख पसार कर,
घर घर झूने गिरिधर राधा स्वर्ण हिंडोले डालकर ।

सुरधनु से छूटे बौछारो के शर मोती कण,
बिधे अटारी और झरोखो की स्वामिनि के मन ।
गूँगी हुई चकोरी जैसे मुरली माधव बिन,
ऐसे मे घन गरजे बैरी डरे हिया छिन छिन ।

आहट मिली धरा को सावन आता राखी बाँध कर,
पी पी पिहकी दूर पपिहिरी पी को कही पुकार कर ।

कैद आँचल की
मुक्ति मधु छलकी।

शीश विजन झले,
बाहुमाल गले।
आज को भोगा,
सुध नही कल की

श्वास परिरम्भन,
सुरभि का दंशन
थाह कब पाई,
अतल के तल को।

वारुणी बिह्वलन,
स्वर बिसुध मधुवन।
वेणु सम्मोहन,
ध्वनि घनी ढलकी।

अक ज्यो शतदल,
मधुप का सम्बल।
मिली दमयन्ती,
विरहणी नल की।

माली के छोरे की रेख भिनी आ रही,
वासन्ती बगिया भी हो रही जवान है।

बूढे सा बरगद है रह रह कर ऊँघता,
झुक झुक कर छोरे का माथा सूँघता।
फगुनहटी झुरुक चली धूल की अबीर ले,
होली की रास रची अमराई के तले।

कुंजो मे सौ बलखाती तन्वंगी लता,
दो दिन के यौवन पर यह शेखी शान है।

बचपन की बस्ती मे तज आई लोरियाँ,
चट चट नस चटखाती कलियो की छोरियाँ
झुक आई आमो को गली हैं बौर से,
लगता है तरुओ की भीग रही हैं मसें।

पतझर के कानो मे मधु ऋतु है कह रही,
यौवन है तन मे तो ज़िदगी जहान है।

फूलों औ पातों मे डूबी टहनी हरी,
ऐसे में पंचम स्वर मे पिहकी बाँसुरी।
भँवरो की गुनगुन मे मानो रति टेरती,
पतझर मे भस्म हुए मन्मथ को हेरती।

उपवन की बीथी मत जाओ नादान रे।
बगिया के हाथों में फूलों के बान है।

मेंहदी और महावर

जयी मन्मथ !

सृष्टि की सम्भावना क्रम,
प्रणय की प्रस्तावना नम,
हर सृजन के दर्द दुखते–
मोद के अथ ।

कुसुम लिपि मे लिखे आमुख,
मूल, जिससे निसृत हर मुख,
अपरिचित तुमसे सभी दुख,
अनवरत गतिशील, सक्रिय,
कब हुए श्लथ ।

सग शोभित प्रियतमा रति,
हर्ष की मधु चरम परिणति,
अतुल है तारुण्य सम्पति,
धमनियो मे वारुणी गति,
सुधा अंग अनग सिञ्चित,
सकल समरथ ।

रूप के आगार अनुपम,
दीप्त छवि से पलायित तम,
मुग्ध क्रम, सयम, नियम, यम,
पाश पाश हुए सभी भ्रम ।
मीन का जयकेतु सज्जित,
रेशमी रथ ।

धवल हास मे सहज निमज्जन,
विष्णुपदी में कलुष विसर्जन,
इतना ही कर पाया केवल ।

कतिपय कल्मषताये पूँजी,
अँधियारे मे राह न सूझी,
सिवा तुम्हारे शक्ति न दूजी,
जो दे सकती टूट रहे को,
आश्रय सम्बल ।

अपराधो को क्षमा दुलारे,
रूठ गया जो उसे बुला रे,
क्षुधित् शुष्क मुख क्षीर घुला रे,
मैं तो तुनुक मिज़ाज़ रहा ही,
पर तुम वत्सल ।

गहन सिंधु या तुंग हिमालय,
सभी रमे तन मे बन कर लय,
अब यह काया है देवालय,
जहाँ प्रतिष्ठापित तुम ही हो,
निर्बल के बल ।

ललचते लोचन लजाये,

अवतरित सम्मुख हुए जब,
चिर प्रतीक्षित स्वप्न जाये।

चिर नहीं तन कम्प थर थर,
सिहर आते रोम भर भर,
धवल सस्मित आरती नव,
अधर पाटल पर सजाये।

स्वेदमय आरक्त आनन,
तुहिन शोभित ज्यों कमल वन,
मन बदन की गति निगोड़ी,
बात गोपन कह न पाये।

नाद मोहित ठगी हरिनी,
प्रीति लय की अजब करनी,
अंग की सुध बुध बिसरती,
कौन ऐसी धुन बजाये।

पोर पोर मे गीत पिराते,
अरसे से अनवरत रच रहा,
पर इतने है जो न सिराते ।

बारह मास यहाँ चौमासा,
मन-मराल भूला भरमा सा ।
पवन परस से पोखर चंचल
लहर उठे हैं अब न थिराते ।

परत परत मे पीर भिन गई,
रैन नयन की नीद छिन गई ।
पर न खिन्न हो पाता पल भर
नटखट शिशु से ऐठ बिराते ।

लघु आकार विशद् अन्तरमन,
गीतो के ये अनगिन वामन,
सभी समाहित, महल अटारी
रूपसि के दल खेत निराते ।

विनत नयन द्वय शुचि आस्तिक से,
जैसे नील कमल दो विकसे ।

वैष्णव विनय सरीखे पावन,
सलज सुदर्शन परम लुभावन,
न्यौछावर प्रिय सकेतो पर,
मान करे क्या प्राणाधिक से ।

श्रद्धा से नत अर्ध निमीलित,
करुणा से भीगे परिचालित,
अपने मे सिमटे सिमटे से,
लाज भरे लोने नख शिख से ।

मोहित ठगे बिके से रीझे,
मन की आँच लगी तब सीझे ।
गगोत्री जमुनोत्री से दो
क्षमा प्रीति के निर्झर निकसे ।

मन भावन का रूप उजागर,
धनवन्तरि के कर से छलकी,
अलभ सुधा की रसमयि गागर ।

मन्द मन्द नूपुर का कलरव,
बिन्दु बिन्दु छवि का मधु आसव ।
श्रवण दृष्टि से मन तक यात्रा
यायावर की पद्ध्वनि नीरव ।
कण कण मुदित नृत्यरत तन्मय
अन्तर का पुलकित नट नागर ।

कनखी के पैने पैने शर,
स्मितियो की प्रत्यञ्चा पर धर ।
छोड़ दिये किस निर्मोही ने
आहृत है यह सकल चराचर ।
सुध बुध के जलयान डूबते,
उफना वशीकरण का सागर ।

दिशि दिश गुञ्जन आमन्त्रण का ।
शिञ्त्रिनि ध्वनि नव आकर्षण का ।
आयी मधुर विसर्जन बेला-
अपनो को अपने अर्पण का ।
इन्द्रजाल ऐसा कुछ व्यापा,
अर्पित हूँ मेरे जादूगर ।

अंग अंग छवि की दीपावलि,
दीपित है अनंग विरुदावलि ।

नभ लोचन मावस का काजल,
पावन हास प्रभा का प्राञ्जल ।
दाडिम दमक दशन रतनावलि ।

रूपविद्ध हो अमा मूर्छिता,
शिथिल लटे साँवली सस्मिता,
नखद्युति न्यौछावर नखतावलि ।

अनगिन लौ कलियों गुडहल की,
कम्पित गात वात गति हलकी ।
भ्रमित चकित तम की भ्रमरावलि ।

वन्दनवार ज्योति के जगमग,
नूपुर लसे सिंधुजा के पग,
युग कपोल चुम्बित अलकावलि ।

नयन सोहते,
जो झिप जाते बाट जोहते ।
अनायास प्रस्फुटित हुए से,
सौदामिनि से चपल त्वरित से,
हास मोहते,
जो उनकी सुधि माल पोहते ।

सपन सोहते,
जिनकी अगवानी को आकुल,
पलक बिछाये नैन जोहते ।
रमता है कण कण मे नर्तन,
विचलित देव दनुज किन्नर जन,
रास मोहते,
जो नस नस मे वेणु स्वरो की,
गुंजित मोहन माल पोहते ।

शयन सोहते,
जिनका पुलक परस रोमाञ्चित,
रंध्र रंध्र मे मधुरस सिञ्चित,
इंद्रिय इंद्रिय प्राण जोहते ।
पाश मोहते,
जिनकी परिधि परे सब सूने,
मुक्त, मुक्ति से बढकर दूने,
मन को मन के साथ पोहते ।

खिली केतकी,
पिय न करो तकरार सेंत को ।

हरसिंगार आँसू आँचल के,
फिर महँके सपने काजल के ।
लाज सरीहन बल खाई है,
दुहर गई ज्यों छरी बेत की ।

फिर महीन ओठों पर थर थर,
कहनी अनकहनी अस्फुट स्वर ।
पाहन दरक चले धीरज के,
चिहराई है नींव रेत की ।

फिर उलाहने और रतजगे,
रहे मीत हम ठगे के ठगे ।
जाने वशीकरण यह कैसा,
सुध न रही खलिहान खेत की ।

प्यासी,

प्यासी,
घनी उदासी
अक्षतवर्णा पूरणमासी ।

गाढा बियावान है सहमा,
रूप चरण क्षत विक्षत आहत ।
सघन स्तब्ध सन्नाटा बिखरा,
घायल पडी हुई है चाहत ।
मन की राहत
है बनवासी ।

रजत धुएँ के झीने पट मे,
लिपटी विधुननया कातर सी ।
अन्तर स्पन्दन से बलखाती,
द्रुत द्राविना नवनीत लतर सी ।
तृषता तरसी,
सदा प्रवासी ।

बँधा हुआ बारीक रश्मि से,
शशि, मासूम सपन का छौना ।
सित कलङ्क से खण्डित दर्पण,
टूट गया शृंगार खिलौना ।
लौटा गौना,
आह पियासी ।

निखिल निनादित 'ढाई आखर',
शब्द अर्थ की उठी यवनिका,
सहज बोध के गुञ्जित है स्वर ।

सकल सृष्टि ही है उनकी स्मिति,
और प्रलय भ्रू की बंकिम गति ।
मौन तुम्हारा आदि न है इति–
भुवन विमोहन कुसुमायुध शर ।

मैं अब तुम मे तुम बन जीता,
पूर्ण समर्पण का मधु पीता ।
भावी वर्तमान या बीता,
सब कुछ हारा, सब कुछ जीता ।
मैं तुम, तुम मै, बने परस्पर ।

रोम रोम से मिला समर्थन,
प्राण प्राण करते अनुमोदन ।
दिग्विजयी अनुराग मुदित मन,
लिये चक्रवर्ती सम्मोहन ।
पिघल रहा है प्रति पल पाहन,
प्लावन मग्न हुआ मन्वन्तर ।

अलकों की श्याम शरण,
तिमिर वरण ।

यात्रिक के शिथिल पाँव,
दूर बहुत दूर गाँव ।
तन व्यापी घनी थकन,
निराकरण ।

व्रण पूरक स्मिति लेपन,
समरथ भ्रू प्रक्षेपन ।
सरबस पीडा निदान,
हेमचरण ।

आकुल अनुताप शयन,
करता मन विनत नमन ।
स्नेह सिक्त सुलभ पुण्य,
शाप क्षरण ।

गीत बटोही,
स्वर आरोही ।
थमे ।

लोचन पनघट,
नटवर नटखट ।
रमे ।

मधु वंशीवट,
जुरती जमघट ।
जमे ।

जनम बिछोही,
अति निर्मोही ।
नमे ।

वातायन से भीतर रह रह झाँक रही,
परकीया सी तन्वंगी सुकुमार लतर।

पवन परस जाता रसवन्ती बलखाती,
अपने अगो की उभरन पर इतराती।
नभ छू लेने का मसूबा बाँध रही,
किससे मिलने को दीवारे फाँद रही।

हर झकोर पर डगमग लडखडा रही,
सुरापान कर झूमे ज्यो अप्सरा सुघर।

हिला डुला कर हरित पात रूमालो को,
विदा दे रही राह गुज़रने वालो को।
हरियाली के फव्वारे सी फूट चली,
अग्नि-शिखा सी ऊर्ध्वमुखी दुबली पतली।

खिड़की पर जब दृष्टि लतर पर मिल जाती;
एड़ी चोटी तक उठता हूँ सिहर, सिहर।

रात सितारो की धनराशि लुटाती है,
कदम तले दूर्वा कालीन बिछाती है।
अभी कुंवारी यौवन कलिका नही खिली,
किसी तरुण तरुवर की बाहें नही मिली।

एक पाँव से खडी तपस्या करती है,
वर पाने को जाने कैसा व्रत लेकर।

किसलय की कोर कोर,
उभरी रतनार डोर।

लगती कुछ अजब आँच,
कोपल का कथ्य बाँच।
बीते क्षण साथ साथ
बैठे हैं पथ अगोर।

नव पल्लव खुले रहे,
शबनम से धुले रहे।
रीत गई रात सकल,
दुखता तन मन मरोर।

डालों पर बेर बेर,
दिखता सूना सबेर।
कलियों के संग सग,
चटख रहा पोर पोर।

जल तरंग सी चूड़ी खनकी,
बाजी बाँसुरिया तन मन की।

खुशबू सी आहट नियराई,
नस नस अकुलाहट लहराई।
बलिहारी उनके सुमिरन की।

फिर वसंत, फिर सावन फागुन,
फिर पञ्चम, भवरो को गुनगुन।
बावरि बौराई बन बन की।

तुलसी के संग फूली जूही,
तुम शायद मुसकाई यूँ ही।
जैसे फुलबगिया मालन की।

फागुन के घन गुलाल बरसो,

पाहुन तुम सावन के गाँव के,
घर आये फागुन उमराव के।
बेमौसम छाये तो क्या हुआ,
तुमने है मन कितनो का छुआ।
बरसो घन यह मुहूर्त टल रहा,
कब से यूँ, आज कल कि परसो।

बिजली की पिचकारी हाथ मे,
बदली भर लाई है साथ मे।
रसवंती रग भरी आ रही,
रगो की गंगा जमुना बही।
घन गर्जन है मृदंग बोल सा,
रसमाते मन-मयूर हरषो।

मंजीरे डफली का राग है,
साँसो पर तिरता-सा फाग है।
आँधी वह लो अबीर की चली,
बौराई है कलियो की गली।
वासती चूनर सी भूमि को,
फूल रही खेतो पर सरसो।

रंग रंग मे भीगे बावरी,
लथपथ हो यह माटी साँवरी।
धरती तो है अमित उछाह मे,
भर लो घन बौछारी बाँह मे।
बरसो, यह मिलने का पर्व है,
दूर खडे यूँ न कुढो तरसो।

मलिन है सुधियों की मनुहार,
थका रिमझिम का सहज दुलार।
प्यार को गहन लग गया है।

अजब है यह अचरज की बात,
तिमिर में डूबा स्वर्णिम प्रात।
घनों की सघन साँवली बाँह,
रोक लेती किरणों की राह।
छिप गया दूर क्षितिज के पार,
रश्मि का चाँदी का घर-बार।
सूर्य को सपन ठग गया है,

भीग कर श्लथ हैं उजले पंख,
ज्योति खग बैठा चकित सशंक।
थका उन्मन है मलय समीर,
दुखी नभ ढरकाता है नीर।
पड़ा है मूर्छित मधु अभिसार,
हो रहा है तम का विस्तार
पुराना दर्द जग गया है।
प्यार को गहन लग गया है।

सेज आमंत्रण सुनो सीमन्तिनी,
सलवटें सौगंध देती है तुम्हे ।

रातरानी सी महॅकती साॅस का,
पार्श्व मे डोला यही पर थम गया ।
औ गुलाबी बादलो का कारवाँ,
चरण से छूटा महावर रम गया ।
विवशता के सिंधु की सौ उर्मि सी
करवटे सौगंध देती है तुम्हे ।

प्यास से परिचय कराया क्यो गया,
इष्ट था यदि बीच मरु मे छोड़ना ।
मुँह लगाया ही गया क्यों इस तरह,
बेरुखी से था अगर मुँह मोडना ।
स्पर्श से उपजे विगत रोमाञ्च की,
आहटे सौगंध देती हैं तुम्हे ।

पास पैताने हठी शिशु से चपल,
नूपुरो के स्वर सिसक कर सो गये ।
शीश सहलाते हुए थक कर यही,
कंगनों के गीत सारे खो गये ।
तर्जनी में लिपटती थी जो सलज,
वे लटें सौगंध देती है तुम्हे ।

साँसो का गुनगुना परस,
जूडे मे फूल जो टँका,
कुम्हलाने को हुआ विवश ।

रूप पिया, गंध भी पिया,
रस लोलुप है बडा पिया ।
अब तक जितना जहाँ जिया,
पिय ने केवल पिया पिया ।
खण्डित कब हुआ सिलसिला
मास गये, दिन गये, बरस ।

पीता है भर भर अँजुरी,
पीले पाटल की पखुरी ।
चदन बाहो से बिछुरी,
लट साँपिन श्यामल बसुरी ।
वह क्षण, वह थल तीरथ है,
जाते तुम जहाँ, जब दरस ।

इतनी वाचाल स्तब्धता,
ऐसे मे क्षम्य हर खता ।
बङ्किम जब देह की लता
क्या होता कौन दे बता ।
गोपन जो कुछ, रहने दो,
कहने से सब हुआ विरस ।

शबनम से धुले अंग सतरंगे मोद मे,
रश्मि कही आ बैठी पकज की गोद मे।

बादल के टुकडे ये तीतर के पंख से,
दर दर हैं डोल रहे आवारा रक मे।
कुहरो की श्यामपखी अँधियारी छाँव मे,
दूर कही उतरी है मटियारे गाँव मे।

मुक्त हुआ भ्रमर, किरण पंखुरियाँ खोलती,
सिहरा तन पोखर का वायु के विनोद मे।

भँवरो ने भूली मधु गलियाँ पहचान ली,
कलियो ने प्रियतम की चोरी भी जान ली।
अलसाई राग भरी गौने की भोर मे;
एक नखत आँसू सा अटका नभ कोर मे।

नइहर तज रूप की गुजरिया है जा रही,
बिछुडन के दर्द और मिलन के प्रमोद मे।

लहरों पर आँचल है बादामी धूप का,
टोना सा छाता है जादूगर रूप का।
पूरब का सौदागर माटी के देश मे,
आया है ललचाने सोने के वेष मे।
धरती का डहकाया भोला सुकुमार जी,
कैसे पतियायेगा दिन के अमोद मे।

चितकबरे नभ की नीली गलियों से है गुजरा,
चाँद पहने घन का गजरा ।

बढती जाती उमस हवा की साँस रुक गई है,
स्याह बदरिया तृषित अधर तक स्वयं झुक गई है ।
प्राची मे उजले बादल की पाँत थम गई है,
आसमान के सीने पर ज्यो बर्फ जम गई है ।
उजली स्निग्ध तरल नभ की गंगा से है गुज़रा,
चाँद का चाँदी का बजरा ।

सुधि के इन्द्रधनुष बुझते हैं चित्र उभरते क्वार के,
जगमग तारे ऐसे जैसे जगते सपने प्यार के।

जैसे उधम मचाकर थककर ज़िद्दी बालक सो गया,
दिशा दिशा खामोश न जाने सबको यह क्या हो गया।
इतने विस्तृत नभ के नीचे अनचाहा मेहमान सा,
खडा हुआ हूँ मूक अकेला अपनो से अनजान सा।
बेपहचाने लगते सूखे पत्ते बन्दनवार के,
बंद खिडकियाँ जैसे पल्ले बंद नियति के द्वार के।

याद दिलाता बिसरे क्षण नभ सलमा जडा कमाल सा,
उजडा पथ ज्यो लुटा हुआ हो बजारा कगाल सा ।

भादो की गदराई नदियाँ थिर जाने किस भार से,
ठिठक ठिठक कर टेर अनकती सिंधु बुलाता प्यार से ।
अब न रही राते कजरारी भीगे दिन बौछार के,
सुनता हूँ चाँदनी रहेगी पर भय हैं पतझार के ।

साँस साँस से सुरभि पी रहा हूँ मै हर्रसिगार की,
ज्यो कोई आवाज लगाता साँकल खटकी द्वार की ।
कोमलतम वरदान शाप की छाँह मिली पथरा गया,
या मरीचिका सा नीला नीला सागर लहरा गया ।
देश निकाला दे बैठे जो अब तक थे घर बार के,
कोई तो लौटा दे मुझको बीते लमहे प्यार के ।

कलिका का मुकुलित यौवन,
अलि का मधु-कर्षण
एक स्नेह का रूप, दूसरा छिछलापन है।

अलसाई सी साँझ ऊँघती अमराई पर,
सिर धर सोती राह विगत की परछाई पर।
खंडहर पर रोती दिन की सूनी तरुणाई,
राहु तिमिर का ग्रास बनी रवि की अरुणाई।
सतत दीप की जलन,
शलभ का प्राण समर्पण।
एक जलन की प्यास, दूसरा पागलपन है।

शिथिल निशा है पड़ी है गगन की दो बाँहो पर,
चाँद विकल हो रहा चकोरी की आहो पर।
किन्तु चाँद की सीमा उसकी स्निग्ध चाँदनी,
पर सीमा पहचान सकी कब प्रीति दामिनी।
क्लान्त उदधि का ज्वार,
पूर्णिमा का आकर्षण।
एक हृदय की क्षुधा, दूसरा आमन्त्रण है।

चीर कुहासा उदित हुआ रवि सिंधु हृदय से,
लाल उषा के गाल मदिर अनुराग प्रणय से।
छिपती जाती महानिशा की काली अलकें,
उन्मीलित हो रही नलिन की तन्द्रिल पलके।
मेघ घटा की गरज,
मयूरो का मृदु नर्तन।
एक निमंत्रण और दूसरा अल्हड़पन है।

रास रची पूनम,
दूर दूर तुम हम ।

वेणु ने पुकारा,
पाश पाश कारा ।
चिहराये धीरज
दरक चले संयम ।

चाँद उगा उजला,
चाँद उगा कजला ।
ओठ थर थराते,
दोनो पलकें नम ।

गोरस रस राका,
करतब विधना का ।
दूध का जला हूँ,
छाँछ बनी शबनम ।

गीत कनखी के,
ज्यो दिये घी के।

अधर तक आते,
पर बिछल जाते।
स्मिति सने नीके।

मात्र मधु इगित,
नयन में अँकित।
सपन ज्यो पी के।

लाज से ललछर,
द्वै कपोल मुखर,
और सब फीके।

हल्दी लगी हथेली जैसा चाँद उगा पूनम का,
और अचानक जी भर आया परदेशी प्रियतम का।

सुधि सागर मे लगे मचलने ज्वार रूप के अनगिन,
लहर डोलती बावरिया सी जनम जनम की बिरहिन।
देख दशा लहरों की उन्मद बेबस हुआ किनारा,
शिथिल हुआ बाँहो का घेरा हर बधन है हारा।

जिस चदा मे सौ सौ उनके चित्र सँजो रक्खें हैं,
संभव मूल्यांकन कैसे उस चाँदी के अलबम का।

टूटे गजरे के फूलों से बिखरे हुए सितारे,
प्रणय गंध भीने रसमाते करते नही इशारे।
तंज़ेबी चाँदनी ओढकर उतरी पूनम उजली,
बिसर गई झूला सावन का, कल की गाई कजली।

लिए इकहरा बदन उतरती किरणे गोरी गोरी,
यह त्यौहार अनोखा आया मोती औ नीलम का।

फुलबगिया ने चंदन के लेपन से अंग सँवारा,
कलियो ने परिमल पराग से रच रच रूप निखारा।
सौरभवाही मलय सयाना थम थम कर चलता है,
ऐसे मे भीतर बाहर का सूनापन खलता है।

कर सोलह शृंगार उमर की सोलह लहरो वाली,
थिरकी तरल तलइया तन मन काँप उठा संयम का।

टेसू टीस रहा,
पर निर्मोही
तुमको क्षण क्षण
हृदय असीस रहा।

किसका कुंकुम,
पाकर गुमसुम।
अरुण बरन पर,
फूले हो तुम।
बता सकोगे
कब कब तुमसे
वह उन्नीस रहा ?

लिए अगिन तन,
सिंदूरी मन ।
राज तुम्हारा-
माना इस क्षण ।
बता सकोगे
नत छवि सम्मुख,
किसका शीश रहा ?

बहुत मनोरम,
अपनो के सम ।
रतनारे मधु,
निज मे अनुपम ।
बता सकोगे
फिर क्यो लगता
टेसू टीस रहा ?

फिर कदम्ब महके,
प्राण प्राण मे बरबस कसमस,
ज्वालामुखि दहके।

गंध गंध सौगंध डोलती,
रग रग मे गोपन टटोलती।
ढीठ बयार बहे कुछ ऐसे आँचल लट बहके।

नील घुलाई उजली चादर,
बिछी जुन्हाई सेज सेज पर।
जाने वाले गये मगर वे गये कुछ न कह के।

वेणु स्वरो की गुञ्जित आहट,
सिमटे आते बाँहों के तट।
बिछल बिछल जाती है वर्तुल लहरें रह रह के।

आश्विन

तुम बिन
दुसहन ज्यों ऋण।

सहज प्यार के,
हर सिंगार के।
काटे कटते नही विरस दिन।

घुलता काजल,
लौटे बादल।
दिन अजगर से रातें नागिन।

जी उदास है
पिय न पास है।
छन जैसे मन्वन्तर अनगिन।

बरगद की छाया में प्यास थकी सो गई।

पीड़ा की पूजा मे सुधियो के दीप जले,
पलको की बगिया मे सपनों के फूल खिले।
राह की जुन्हाई से गति की है आँख भरी,
सौरभ की सिहरन पर झूमी है दूब हरी।

मजिल ने पाव छुए किन्तु प्रगति खो गई।

अम्बर की बाँहो से अँधियारी दूर चली,
शलभो के शव से लो उठती है भोर भली।
डोलती बयार धवल बादल के पंख लिये,
पंथ है निहाल, थके राही को अक लिये

तम का घन चीर कही सौदामिनी रो गई।

नयनो के नीड छोड निंदिया परदेश चली,
ऊषा के गागर से छलकी है ज्योति भली।
कलरव का मुरली स्वर डालो पर गूँज रहा,
प्राची से धरती पर कंचन द्रव फूट बहा।

कलियों की पलकें श्लथ ओस कही धो गई।

सुन रहे हो अजी !
गीत से गूँजती वीथियाँ क्यों तजी ?

सेज पर स्निग्ध आहट सुलगने लगी,
याद की स्याह लट प्राण कसने लगी।
फिर भँवर मे पडी कश्तियाँ कागजी।

तिर रही तृप्त आसावरी शबनमी,
फिर अखरने लगी है तुम्हारी कमी।
छंद के घुँघुरुओ की पयलिया बजी।

फिर लहरने लगी विषभरी करवटें,
सर्पिणी सी लहरती मदिर सलवटें।
फिर तुम्हारी तरह ब्राह्म बेला सजी।

उजले से चंदा की गोद मे विभावरी,
प्रियतम पर रीझ गई लजवन्ती साँवरी।

भीनी सी वात बही, भोली मनुहार की,
चितवन के विनिमय की बेला है प्यार की।
उतरे सुकुमार सपन चाँदी की देह मे,
तन मन सब भीग रहा शबनम की मेह मे।

बगिया घर पाहुन बन आई है चाँदनी,
बौराई दिशि दिशि मे गंध फिरी बावरी।

तन्वंगी दूबों की शुकपंखी सेज पर,
सोया है मूर्छित सा रूप अमिय वेष धर,
लगता है कण कण में वशीकरण छा रहा,
नील मानसर मे है हंस चला आ रहा।

तापस तक पूनम की रात सजी मन चली,
चुपके से आई है चपल दबे पाँव री।

जागा है माटी का सोंधा अहिवात रे,
डोने अगवानी मे हरे भरे पात रे।
लहरों की बस्ती मे किरणों की रूपसी,
मदिरा सी पीती है तिनको की बेबसी।

रश्मि सजी दुलहन सी डोंगियाँ थिरक रही,
माँझी सँग फिरती है सात सात भाँवरी।

कोहबर का दिया नेह बिना बुझा जा रहा,
पूरब से झाँकता सुहाग का विहान है।

पाँव मे महावर दे कलरव की पैजनी,
रश्मि कही बुनती है ऊषा की ओढनी।
चाँद बुझा; धरती पर फिर से भिनसार हुआ,
तारो के पात झरे, नभ मे पतझार हुआ।

रात छिपी बन ठन कर भुरहरिया आ रही,
जानूँ ना छोरी को कौन सा गुमान है।

गहबर रँग पियरी का आसमान पर चढा,
साँवला शरीर सखी सोने मे है मढा।
कुलवन्ती माटी के पीले हैं हाथ हुए,
बेगाने दो पथ के राही हैं साथ हुए।

धडकन मे बँधा सरल मृग छौने सा हिया,
उम्र के तकाजों से बिलकुल अनजान है।

किरणों के काँधे चढ सूरज की पालकी,
फेंक रही मन पर है डोर रूप जाल की।
सूख रही गंगा मे उठ आई रेत सी,
बादल की राशि है कछारो के खेत सी।

तम का तन बिंध बिंध कर छलनी है हो गया,
तीर चले जिससे वो कौन सी कमान है।

उम्र सोलह की,
चटख कर महँकी।

प्यार का मनुहार का मौसम,
रार का तकरार का मौसम।
गुदगुदी चोरी चिकोटी का,
लाज का अभिसार का मौसम।
कनखियाँ बहकी।

भार की अभार की बेला,
भार और उभार की बेला।
छाँटते रूखे कगारों को,
धार की रसधार की बेला।
पिकी सी पिहकी।

डोलियों के मन ललच डोले,
सजे पी के नगर के डोले।
अनसुनी कर लोरियाँ लोनी,
प्राण भूले सपन हिंडोले।
मरु तृषा दहकी।

रात शरद की,

जैसे टेक सुहानो लोनी
मीराँ के रस भीगे पद को।

उजली उजली मुसकानो सी,
भूली बिसरी पहचानो सी।
चोरी चोरी आहट प्रिय की—
प्रीति 'सबद' की।

हरसिंगार से महँकी महँकी,
किरण इकहरी बहकी बहकी।
कलियों के ओठो से छलकी–
राशि शहद की।

नरम नरम नैनू का मेला,
फूली रजनीगंधा वेला।
सूली ऊपर सेज पिया की–
विह्वल मद की।

दहके गुलमोहर,
आतप अग्नि अधर का चुम्बन,
सुलग उठी दुपहर ।

अगम तृषा होठो पर,
पपड़ी बन कर बैठ गई ।
अन्तर तपन मूर्त हो आई,
किन्तु न बात गई ।
धूल हुआ सपनो का क्रन्दन, छूट गया पीहर ।

दुबलाई नदिया जैसे हो,
तन्वी निर्वसना ।
चीर हरण कर सूरज,
कृष्ण सरीखा ढीठ बना ।
गुमसुम सी अपने में सिमटी
छोटी बडी लहर ।

रतनारे लोचन, कपोल की,
सुधियों के वाहक ।
मेहदी और महावर के रंग,
मन बहका नाहक ।
अरुणाई मे अरझ गया जी बिरमे पहर पहर ।

बीते कितने दिन,
मनवासी तुम बिन ।

स्मृति शर से आहत,
पा न सका राहत,
जैसे जनम जनम का दुश्मन
बदला ले गिन गिन ।

रुँधी सभी राहें,
घेर रही बाँहे,
एक मरोर कसकती कसती,
दुखता मन छिन छिन ।

कण कण है दर्पण,
दिखता चन्द्रानन,
मन का चन्दन-वन घेरे हैं
अलकों की साँपिन ।

ठौर, ठौर,
लगे बौर,
जैसे ऋतुराज सखी
आया सिर बाँध मौर।

पिक पिहके,
जी बहके।
सुधि आये,
रह रह के।
बौराया, बौराया,
अपना मन कहीं और।

गुन गुन गुन,
अलि की धुन,
बन बीथी,
अति दारुण।
धूप छाँह उस तन की,
नव निकुञ्ज श्याम गौर।

सुमन जुरे,
दिन बहुरे,
सुर धनु से,
रँग बटुरे।
बरन बरन रँग रचे,
रँगों का अजब दौर।

फूली अलसी,

जैसे अनगिन नीली आँखे,

हेर रही प्रियपथ विह्वल सी।
तरल तुषार कणों को बुनकर,
भिनसारे कुहरो की दोहर।
ओढ सुभीते से अलबेली,
रवि तन निरखे परम विकल सी।

नटखट पवन परस देता तन,
लच लच जाते कुसुमित आनन।
लहराती सुमनों की पाँतें;
झीलों के नीलम आँचल सी।

किरणों की नव सोन मञ्जरी,
गलबाँहे देती उजागरी।
परछाँई कुसुमो में रमती,
आँज गई नयनन काजल सी।

रात उनीदी,
दिन अलसाये।
परदेशी जब से घर आये।

अधर पुलिन पर,
कँपते हैं स्वर।
छंद उतरते अनायास ही,
सोम नहाये।

गंध सयानी,
प्राण समानी।
कंधों के छज्जे यौवन घन,
घिर लहराये।

सम्मोहनमय,
क्षण क्षण परिणय।
नभ पर अलबेला नखतो की,
चौक पुराये।

तुम्हें देखकर
लगा कि जैसे
रूप मिला मेरी धडकन को।

प्यासे तक ज्यो स्वयं कुँआ आया है चलकर
या फिर मेरे दिन बदले है चाल बदलकर।
कुछ भी हो पर इतना अनुभव कर पाया हूँ
रहम आ गया है मुझ पर मेरी अडचन को।

मुए धान ज्यो पानी पडा फसल हरियाई,
पतझर के आँगन कोयल ने वेणु बजाई।
भूमि और आकाश दिशाएँ रस से माती,
राधा की पैजनी सुन पडी मन मोहन को।

मरुथल के घर खिली कमलिनी अचरज भारी,
फूलो से भर आई है काँटों की क्यारी।
फूला नही समाता मन यह देख रहा है,
पहनाती वरमाल कजलियाँ सावन घन को।

छिन रीझे,
छिन रूठे,
मनभावन के ढंग अनूठे ।

बित्ता भर के दिवस शिशिर के
पल भर को कमरो मे थिरके
उडे, पंख पद बाँध निठुर ज्यो,
परदेसी के वादे झूठे ।

निशि मुख का दिन बना निवाला,
टल न सका क्रम, कितना टाला ।
रीत गये दालान झरोखे,
निर्धन के ज्यो बासन जूठे ।

साँझ चहकती सोन चिरैया,
गाँव गाँव ले चली बलैया
नित की छलना के उकताकर,
हरियर पेड हुए सब ठूँठे ।

अमलतास फूले ।

हम तो सुधि वीथी मे बिरमे,
बौराये भूले ।

तन धारे मरकत आभूषण,
उघरे सुषमा के अवगुण्ठन ।
मीत न टेरो ऐसा हर स्वर,
मर्मस्थल छू ले ।

हर पाती उनकी है पाती,
बाँचे तबियत नही अघाती ।
सुख-दुख के दो पाहुन,
पलक हिंडोलो मे भूले ।

लगी नरम बाँहो सी टहनी,
बिसर गया, जो बातें कहती ।
अधर बावरे वेणु हेरते--
कालिन्दी कूले ।

उनकी सिंदूर रची माँग है भली,
बादल के गाँव ज्यो गुलाब की गली ।

कुन्तल की छाँव घना दूधिया अँधेरा,
रूपगंध ने काले भँवरो को टेरा ।
गजरों सी गमकी दो बाँह सन्दली ।

रंग रंग फूला है अग गुलहज़ारा,
नख शिख लहराती ज्यों नभ गंगा धारा
क़श्ती सी उतराई आँख बावली ।

पावस की रिमझिम औ शरद की जुन्हाई,
कलियो की सेज सजी मधुऋतु अलसाई ।
मान की कमान तनी भौंह साँवली ।

उम्र मिलन की कितनी थोड़ी,
बीत चली है चपल निगोडी
तन्मयता कुछ,
मूर्छित सपने।
रीते क्या,
सब छूटे अपने
तिल तिल कर रच रच कर जोडो

डोर रेशमी,
मरकत भूले,
वशीकरण मय
सुध बुध भूले।
किसने निदय करम गति मोड़ी।

दीर्घ प्रतीक्षा,
अग्नि परीक्षा,
प्रीति की रीति
अनुपम दीक्षा।
छूटा सब पर, आस न छोडी।

सोने का भिनसार सलोना चाँदी की राते,
आया शरद बिसरती रिमझिम कजरारी घाते ।

चंदा जैसे नटखट बालक खेले आँगन मे,
और चाँदनी मह मह महँकी माटी के कण मे ।
झबरे झबरे उजले बादल डोले अम्बर मे,
इन पर सर धर सोता कोई नीलम के घर मे ।

नभ गंगा तट पर दो तारो की गुपचुप बातें,
सुधि हो आई क्या सौदागर बिसरो सौगाते ।

खाली खाली भूरी बदली लौट रही बैरिन,
पनघट से ज्यों रीता घट ले लौटे पनिहारिन ।
उड़न खटोले पर समीर के उतर रही शबनम,
प्यार पिघल कर बरस रहा है भीग रहे हम तुम ।

साँझ रूपहले बगुलो की ले आती बरातें,
और उभरती जल से रजत मछलियों की पातें ।

लेपन कर धरती नभ तन पर चाँदी का उबटन,
दूर देश है चली कही पर तारों की पलटन ।
हरसिंगार की गंध साँस मे भर भर जाती है,
मधुवन से नव रास नृत्य की पगध्वनि आती है ।

खो जाते हैं, किस प्रदेश मे यह दिन फिर आते,
होती सहज निछावर जिनपर सौ सौ बरसातें ।

डालो मत डोरे,
डगर पिय अगोरे ।

लजवन्ती मूरत
मनभावन सूरत ।
जन्मा हो जैसे
प्यार का मुहूरत ।
चितवन के दर्पण,
दूध के कटोरे ।

रंग चढी गहबर,
यौवन की दुपहर ।
बहकी कुछ ऐसी,
तज आई नइहर ।
कौन से भरोसे,
कौन से निहोरे ।

बिनती कर जोरी,
नाहक बरजोरी ।
बरजो रे बरजो,
काहे मति भोरी ।
झूठी सब कसमे,
वादे सब कोरे ।

आँचल से उलझ गये शूल हठीले,
विहँस उठे फूल फूल छैल छबीले ।

धुली हुई कलियो सा रूप यह अनोखा,
बार बार होता है,
भँवरो को धोखा ।
कुढते है कनखी के कोर कटीले,
श्रम से लच लच जाते अग लचीले ।

नैनू की गुडिया है,
चाँद की सहेली ।
रसवन्ती रंग भरी सी
नई नवेली ।
रसमाते अंग अंग रंग रँगीले,
रूँधे बैन, नैन झुके रास रसीले ।

परियो के किस्सो की
गोरी शहजादी,
शहजादो की जिसने
सुध बुध बिसरा दी ।
लट, जैसे बादल के श्याम कबीले,
नयनो के रेशे रतनार नशीले ।

संगमरमर अँगुलियो मे क्रोशिया,
और सुधियो मे महकता है पिया ।

सिर झुका ज्यों छाँव के
नीचे खिली हो धूप,
साँस मे ज्यो भिन गये हो,
अगरु, चन्दन, धूप ।
रूप दिपता सगुन, ज्यो घी का दिया ।

इकहरी फूलो लदी टहनी
युवा गुलनार ।
छोह से छाई हुई सुकुमार
छवि छतनार ।
पान कतरे ओठ पतले मूँगिया ।

रँगोली सा रंग भीगा धना का हर अंग,
घाम, बिजली, मेघ, सुरधनु,
बदन मे सब सँग ।
चम्पई तन गौर, कुछ कुछ हल्दिया ।
और सुधियो में महँकता है पिया ।